योगशिक्षा का महत्व

EMAIL - rajivranjanpandey555@gmail.com
MB - 8709001909
Pro. Dr. Rajiv Ranjan Pandey, ASSISTANT PROFESSOR, PHILOSOPHY
RBGR COLLEGE, MAHARAJGANJ, SIWAN
J.P. University, Chhapra

योग एक मानवशास्त्र है जिसमें मन को संयत करना और पाशविक वृत्तियों से खींचना सिखाया जाता है। जीवन की सफलता किसी भी क्षेत्र में संयत मन पर ही निर्भर करती है। मनःसंयम का अभिप्राय है किसी एक समय में किसी एक ही वस्तु पर चित्त का एकाग्र होना। दीर्घकालतक अभ्यास करने से मन का ऐसा स्वभाव बन जाता है। किसी विषय को सोचते या किसी काम को करते हुए मन उसपर एकाग्र रहे, ऐसा अभ्यास करना आरम्भ में तो बड़ा कठीन होता है; पर जब अभ्यास करते-2 वैसा स्वभाव बन जाता है, तब उससे बड़ा सुख होता है।

ठीक-ठीक और सुसंगत रीति से न सोच सकना या अच्छे ढंग से कोई काम न कर सकना, विचार और काम में मन की चञ्चलता से ही होता है। विद्यार्थी जानते है कि मन स्थिर न हो तो कोई बात सीखी नहीं जा सकती, और मजदूर जानते है कि अस्थिर मन से कोई काम नहीं हो सकता। बहुत से विद्यार्थी जो प्रतिवर्ष विश्वविद्यालय की परीक्षाओं में फेल हुआ करते है। इसका कारण यही है कि अध्ययन में मन को एकाग्र करने की शक्ति ही उनमें नहीं होती। यही बात - सांसारिक विषयों में होनेवाली विफलताओं की है। जबतक मनुष्य अपने विचारणीय विषय या करणीय कार्य में तन्मय नहीं होता, तबतक उसे उसमें सफलता मिल ही नहीं सकती है।

मन के इस विशिष्ट धर्म से योगशास्त्र के प्रयोगकर्त्ता प्रणेताओं ने धार्मिक क्षेत्र में भी काम लिया है। योग स्वंय कोई धर्मसम्प्रदाय विषयक तत्वज्ञान नही है, प्रत्युत यह संसार के सभी धर्मों एवं तत्वज्ञानों का सहायक है। इसे किसी धार्मिक सिद्धान्त का प्रचार नहीं करना है। संसार के सभी धर्मवालों को इसके द्वारा यह शिक्षा मिलती है कि किस प्रकार अपनी-2 धर्मविषयक बातों में मन को एकाग्र करने से शांति और आनंद प्राप्त होता है। पातञ्जलयोगसूत्रों में जिस विषय का मुख्यता प्रतिपादन किया जाता है, वह है - 'चित्तवृत्तिनिरोध' अर्थात अन्य विषयों से चित्त को खींचकर एक ही विषय में एकाग्र करना। मन को एकाग्र करने की शक्ति निरन्तर अभ्यास और सांसारिक भोगों से मुँह मोड़ने से प्राप्त होती है। सूत्र 23-39 में पतञ्जलि मुनि कहते हैं कि ईश्वर-प्रणिधान से अथवा जिस विषय में अपनी रुचि उसी पर ध्यान जमाने से चित्त को स्थिर करने की शक्ति प्राप्त होती है। ईश्वर इस रूप में ध्यान किया जा सकता है कि वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान सर्वव्यापी

Scanned by CamScanner

ईश्वर का इस रूप में ध्यान किया जा सकता है कि वह सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् सर्वव्यापी सगुण परमेश्वर है अथवा इस रूप में भी ध्यान किया जा सकता है कि वह निर्गुण-निरञ्जन परब्रह्म है, जिनमें प्रेम, द्वेष, दया, सृष्टि स्थिति, संहार आदि कोई गुण नहीं है। योगदर्शन ईश्वर के विषय में इतना ही कहता है कि वह कोई ऐसे पुरुष है, जो क्लेश, कर्म, विपाक और आशय से नित्यमुक्त है। ईश्वर को प्रसन्न करने के लिये कोई यज्ञ, याग या तप अनुष्ठान योगसूत्रों में नहीं बताया गया है। यदि कोई धर्मसम्प्रदाय अपने अनुयायियों को ऐसी कोई बात बतलाता है, तो योगसूत्रों में उसका कोई विरोध भी नहीं है; पर योगसूत्र यह अवश्य कहते हैं कि तुम जो कुछ करो, उसे सच्चे हृदय से और तन्मय होकर करो। मेरे विचार में योगसूत्र तथा अद्वैतप्रतिपादक उपनिषद् ही ऐसे ग्रंथ हैं, जिनमें कोई साम्प्रदायिकपन नहीं है। अतः कोई किसी धर्म का हो, इसकी कोई परवाह नहीं; यदि वह अपने धर्म का पालन करने में यदि योगसूत्रों की शिक्षा से काम लेता है तो इसमें उसका बड़ा लाभ है। यही नहीं, बल्कि योग शिक्षा से अर्थकारी विद्या के अध्ययन में, कृषि और उद्योगधंधों में, सामरिक शिक्षा में, युद्ध, व्यापार और राज्यशासन से भी काम लिया जाय, तो इन क्षेत्रों में भी सफलता निश्चित है। यही तो बात है, जिसको रोग मन को हर लेता है।

इसमें संदेह नहीं कि योगसूत्रों में जो लक्ष्य सामने रखा गया है, वह द्रष्टा का अर्थात आत्मा का अपने स्वरूप में अवस्थान है। इसका यह मतलब है कि योगसूत्रों के सिद्धान्तों का निरंतर आचरण करने से चित सांसारिक भोगों से विरत होकर निज स्वरूप में स्थिर हो जाता है। चित्तवृत्तियों का यह निरोध किसी भी धर्मसम्प्रदाय की शिक्षा के प्रतिकूल नहीं है। ऐसा स्वरूपावस्थान सांख्य और अद्वैत सिद्धान्त का तो प्रतिपाद्य ही है। सगुण ईश्वर को मानने वाले सम्प्रदायों में भी कोई न कोई महान लक्ष्य सामने रहता है ही।

'स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है' यह सिद्धान्त सर्वमान्य है। लौकिक एवं पारलौकिक दोनों ही प्रकारों के प्रयासों की सफलता के लिये स्वस्थ शरीर इसीलिये आवश्यक है। योग शिक्षा में आहार-विहार के नियमों का पालन अत्यंत आवश्यक है। गीता में स्पष्ट ही कहा है कि जो 'युक्ताहारविहार' नहीं है, उन्हें जीवन में कोई सफलता नहीं मिल सकती।

Scanned by CamScanner

योगसूत्र के २ भाग हैं - हठयोग और राजयोग। हठयोग आसनों की क्रिया है - आसनों से आरोग्य और बल प्राप्त होता है। आसनों की रचना ऐसी है कि जिससे शरीर के अंग-प्रत्यंग का व्यायाम हो जाय। उदाहरणार्थ मयूरासन से सब अंतड़ियों का व्यायाम हो जाता है। जिससे अपच तथा वायु की शिकायत नहीं रहती; प्राणायाम से प्राणवायु मिलती है और अशुद्ध वायु निकल जाती है। गीता के समान ही हठयोग में भी मिर्ची, मसाला आदि की मनाही है। राजस एवं तामस आहार का सर्वथा त्याग है। मसालेदार पदार्थ खानेवाला, राजस मनुष्य उस आहार के कारण क्रोधी, लालची और कामी होता है। और तामस आहार करनेवाला मनुष्य आलसी, दीर्घसूत्री और प्रमादी होता है। हठयोग में जिसे सात्विक आहार कहा है, उससे सद्गुणों की वृद्धि होती है, और आरोग्य एवं बल बढ़ता है। यह कोई न समझे कि योग की यह शिक्षा योगियों के लिये ही है, सबके लिये नहीं। योगी शब्द से अत्यंत व्यापक अर्थ लिया जाय तो जो कोई संसार में सदाचार से रहकर जीवन को सफल करना चाहता है, वही योगी है। सभी धर्म यह बतलाते हैं कि सदाचार से रहकर ही स्वर्ग प्राप्ति हो सकती है। योग में सदाचार का अर्थ केवल सामाजिक शिष्टाचार नहीं है, बल्कि आहार-विहार का नियम भी है।

आधुनिक सभ्यता की सब बुराइयों की जड़ आहार-विहार के विषय में किसी मर्यादा का न होना, विषयभोग और अधार्मिकता ही है। सच्चे सदाचारी मनुष्य को संसार के किसी न किसी धर्म को मानकर चलने में कोई दिक्कत नहीं होती है। सदाचार एवं धर्म अन्योन्याश्रयी है। योग यथायोग्य आहार-विहार, यथायोग्य उठने-जागने-कर्म-चेष्टा करनेवाले का सिद्ध होता है।

प्रसन्नचित और सदाचारी पुरुष को स्वर्ग का सुगम, प्रशस्त और समीप का मार्ग मिल जाता है। वह सबका मित्र होता है। वह न किसी से द्वेष करता है न राग। काम-क्रोध, लोभ से मुक्त धर्मवान होता है। यौगिक जीवन के अनुकूल कोई भी काम करने उसके सामने संसार का मैदान खाली है। वह कला या विज्ञान सीखकर दूसरों को सिखा सकता है। वह धन एकत्र कर गरीबों की मदद कर सकता है। वह दूसरों के कल्याण के लिये राजनैतिक नेता या शासक बन सकता है। उसकी जीवनपद्धति ऐसी है कि वह दीर्घायु होता है। उसके लोक-परलोक दोनों सुधर जाते हैं। योगसूत्र में यौगिक रहस्य आनंदपूर्ण है - यह साम्प्रदायिक नहीं है। न इसमें अन्धविश्वास की बात है। यह सबका उपकारक प्रत्यक्ष योग है।

— हरि ॐ —

Scanned by CamScanner